पत्नी का पत्र

श्रीचरणकमलेषु,

आज हमारे विवाह को पंद्रह वर्ष हो गए, लेकिन अभी तक मैंने कभी तुमको चिट्ठी न लिखी। सदा तुम्हारे पास ही बनी रही - न जाने कितनी बातें कहती सुनती रही, पर चिट्ठी लिखने लायक दूरी कभी नहीं मिली। आज मैं श्रीक्षेत्र में तीर्थ करने आई हूँ, तुम अपने ऑफिस के काम में लगे हुए हो। कलकत्ता के साथ तुम्हारा वही संबंध है जो घोंघे के साथ शंख का होता है। वह तुम्हारे तन-मन से चिपक गया है। इसलिए तुमने ऑफिस में छुट्टी की दरख्वास्त नहीं दी। विधाता की यही इच्छा थी; उन्होंने मेरी छुट्टी की दरख्वास्त मंजूर कर ली। तुम्हारे घर की मझली बहू हूँ। पर आज

पंद्रह वर्ष बाद इस समुद्र के किनारे खड़े होकर मैं जान पाई हूँ कि अपने जगत और जगदीश्वर के साथ मेरा एक संबंध और भी है। इसीलिए आज साहस करके यह चिट्ठी लिख रही हूँ, इसे तुम अपने घर की मझली बहू की ही चिट्ठी मत समझना!

तुम लोगों के साथ मेरे संबंध की बात जिन्होंने मेरे भाग्य में लिखी थी उन्हें छोड़कर जब इस संभावना का और किसी को पता न था, उसी शैशवकाल में मैं और मेरा भाई एक साथ ही सन्निपात के ज्वर से पीड़ित हुए थे। भाई तो मारा गया, पर मैं बची रही। मोहल्ले की औरतें कहने लगीं, "मृणाल लड़की है न, इसीलिए बच गई। लड़का होती तो क्या भला बच सकती थी।" चोरी की कला में यमराज निपुण हैं, उनकी नजर कीमती चीज पर ही पड़ती है। मेरे भाग्य में मौत नहीं है। यही बात अच्छी तरह से समझाने के लिए मैं यह चिट्ठी लिखने बैठी हूँ।

एक दिन जब दूर के रिश्ते में तुम्हारे मामा तुम्हारे मित्र नीरद को साथ लेकर कन्या देखने आए थे तब मेरी आयु बारह वर्ष की थी। दुर्गम गाँव में मेरा घर था, जहाँ दिन में भी सियार बोलते रहते। स्टेशन से सात कोस तक छकड़ा गाड़ी में चलने के बाद बाकी तीन मील का कच्चा रास्ता पालकी में बैठकर पार करने के बाद हमारे गाँव में पहुँचा जा सकता था। उस दिन तुम लोगों को कितनी हैरानी हुई। जिस पर हमारे पूर्वी बंगाल का भोजन - मामा उस भोजन की हँसी उड़ाना आज भी नहीं भूलते।

तुम्हारी माँ की एक ही जिद थी कि बड़ी बहू के रूप की कमी को मझली बहू के द्वारा पूरी करें। नहीं तो भला इतना कष्ट करके तुम लोग हमारे गाँव क्यों आते। पीलिया, यकृत, उदरशूल और दुल्हन के लिए बंगाल प्रांत में खोज नहीं करनी पड़ती। वे स्वयं ही आकर घेर लेते हैं, छुड़ाये नहीं छूटते। पिता की छाती धक्-धक् करने लगी। माँ दुर्गा का नाम जपने लगी। शहर के देवता को गाँव का पुजारी क्या देकर संतुष्ट करे। बेटी के रूप का भरोसा था; लेकिन स्वयं बेटी में उस रूप का कोई मूल्य नहीं होता, देखने आया हुआ व्यक्ति उसका जो मूल्य दे, वही उसका मूल्य होता है। इसीलिए तो हजार रूप-गुण होने पर भी लड़कियों का संकोच किसी भी तरह दूर नहीं होता।

सारे घर का, यही नहीं, सारे मोहल्ले का यह आंतक मेरी छाती पर पत्थर की तरह जमकर बैठ गया। आकाश का सारा उजाला और संसार की समस्त शक्ति उस दिन मानो इस बारह-वर्षीय ग्रामीण लड़की को दो परीक्षकों की दो जोड़ी आँखों के सामने कसकर पकड़ रखने के लिए चपरासगीरी कर रही थी- मुझे कहीं छिपने की जगह न मिली।

अपने करुण स्वर में संपूर्ण आकाश को कँपाती हुई शहनाई बज उठी। मैं तुम लोगों के यहाँ आ पहुँची। मेरे सारे ऐबों का ब्यौरेवार हिसाब लगाकर गृहिणियों को यह स्वीकार करना पड़ा कि सब-कुछ होते हुए भी मैं सुंदरी जरूर हूँ। यह बात सुनते ही मेरी बड़ी जेठानी का चेहरा भारी हो गया। लेकिन सोचती हूँ, मुझे रूप की जरूरत ही क्या थी। रूप नामक वस्तु को अगर किसी त्रिपुंडी पंडित ने गंगा मिट्टी से गढ़ा हो तो उसका आदर हो, लेकिन उसे तो विधाता ने केवल अपने आनंद से निर्मित किया है। इसलिए तुम्हारे धर्म के संसार में उसका कोई मूल्य नहीं। मैं रूपवती हूँ, इस बात को भूलने में तुम्हें बहुत दिन नहीं लगे। लेकिन मुझमें बुध्दि भी है, यह बात तुम लोगों को पग-पग पर याद करनी पड़ी। मेरी यह बुध्दि इतनी प्रकृत है कि तुम लोगों की घर-गृहस्थी में इतना समय काट देने पर भी वह आज भी टिकी हुई है। मेरी इस बुध्दि से माँ बड़ी चिंतित रहती थीं। नारी के लिए यह तो एक बला ही है। बाधाओं को मानकर चलना जिसका काम है वह यदि बुध्दि को मानकर चलना चाहे तो ठोकर खा-खाकर उसका सिर फूटेगा ही। लेकिन तुम्हीं बताओ, मैं क्या करूँ। तुम लोगों के घर की बहू को जितनी बुध्दि की जरूरत है विधाता ने लापरवाही में मुझे उससे बहुत ज्यादा बुध्दि दे डाली है, अब मैं उसे लौटाऊँ भी तो किसको। तुम लोग मुझे पुरखिन कहकर दिन-रात गाली देते रहे। अक्षम्य को कड़ी बात कहने से ही सांत्वना मिलती है, इसीलिए मैंने उसको क्षमा कर दिया।

मेरी एक बात तुम्हारी घर-गृहस्थी से बाहर थी जिसे तुममें से कोई नहीं जानता। मैं तुम सबसे छिपाकर कविता लिखा करती थी। वह भले ही कूड़ा-कर्कट क्यों न हो, उस पर तुम्हारे अंत:पुर की दीवार न उठ सकी। वहीं मुझे मृत्यु मिलती थी, वहीं पर मैं रो पाती थी। मेरे भीतर तुम लोगों की मझली बहू के अतिरिक्त जो कुछ था, उसे तुम लोगों ने कभी पसंद नहीं किया। क्योंकि उसे तुम लोग पहचान भी न पाए। मैं कवि हूँ, यह बात पंद्रह वर्ष में भी तुम लोगों की पकड़ में नहीं आई।

तुम लोगों के घर की प्रथम स्मृतियों में मेरे मन में जो सबसे ज्यादा जगती रहती है वह है तुम लोगों की गोशाला। अंत:पुर को जाने वाले जीने की बगल के कोठे में तुम लोगों की गौएँ रहती हैं, सामने के आँगन को छोड़कर उनके हिलने-डुलने के लिए और कोई जगह न थी। आँगन के कोने में गायों को भूसा देने के लिए काठ की नाँद थी, सवेरे नौकर को तरह-तरह के काम रहते इसलिए भूखी गाएँ नाँद के किनारों को चाट-चाटकर चबा-चबाकर खुरच देतीं। मेरा मन रोने लगता। मैं गँवई-गाँव की बेटी जिस दिन पहली बार तुम्हारे घर में आई उस दिन उस बड़े शहर के बीच मुझे वे दो गाएँ और तीन बछड़े चिर परिचित आत्मीय - जैसे जान पड़े। जितने दिन मैं रही, बहू

रही, खुद न खाकर छिपा-छिपाकर मैं उन्हें खिलाती रही; जब बड़ी हुई तब गौओं के प्रति मेरी प्रत्यक्ष ममता देखकर मेरे साथ हँसी-मजाक का संबंध रखने वाले लोग मेरे गोत्र के बारे में संदेह प्रकट करते रहे।

मेरी बेटी जनमते ही मर गई। जाते समय उसने साथ चलने के लिए मुझे भी पुकारा था। अगर वह बची रहती तो मेरे जीवन में जो-कुछ महान है, जो कुछ सत्य है, वह सब मुझे ला देती; तब मैं मझली बहू से एकदम माँ बन जाती। गृहस्थी में बँधी रहने पर भी माँ विश्व-भर की माँ होती है। पर मुझे माँ होने की वेदना ही मिली, मातृत्व की मुक्ति प्राप्त नहीं हुई।

मुझे याद है, अंग्रेज डॉक्टर को हमारे घर का भीतरी भाग देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ था, और जच्चा घर देखकर नाराज होकर उसने डाँट-फटकार भी लगाई थी। सदर में तो तुम लोगों का छोटा-सा बाग है। कमरे में भी साज-श्रृंगार की कोई कमी नहीं, पर भीतर का भाग मानो पश्मीने के काम की उल्टी परत हो। वहाँ न कोई लज्जा है, न सौंदर्य, न श्रृंगार। उजाला वहाँ टिमटिमाता रहता है। हवा चोर की भाँति प्रवेश करती है, आँगन का कूड़ा-कर्कट हटने का नाम नहीं लेता। फर्श और दीवार पर कालिमा अक्षय बनकर विराजती है। लेकिन डॉक्टर ने एक भूल की थी। उसने सोचा था कि शायद इससे हमको रात-दिन दु:ख होता होगा। बात बिल्कुल उल्टी है। अनादर नाम की चीज राख की तरह होती है। वह शायद भीतर-ही-भीतर आग को बनाए रहती है लेकिन ऊपर से उसके ताप को प्रकट नहीं होने देती। जब आत्म-सम्मान घट जाता है तब अनादर में अन्याय भी नहीं दिखाई देता। इसीलिए उसकी पीड़ा नहीं होती। यही कारण है कि नारी दु:ख का अनुभव करने में ही लज्जा पाती है। इसीलिए मैं कहती हूँ, अगर तुम लोगों की व्यवस्था यही है कि नारी को दु:ख पाना ही होगा तो फिर जहाँ तक संभव हो उसे अनादर में रखना ही ठीक है। आदर से दु:ख की व्यथा और बढ़ जाती है।

तुम मुझे चाहे जैसे रखते रहे, मुझे दु:ख है यह बात कभी मेरे खयाल में भी न आई। जच्चा घर में जब सिर पर मौत मँडराने लगी थी, तब भी मुझे कोई डर नहीं लगा। हमारा जीवन ही क्या है कि मौत से डरना पड़े? जिनके प्राणों को आदर और यत्न से कसकर बाँध लिया गया हो, मरने में उन्हीं को कष्ट होता है। उस दिन अगर यमराज मुझे घसीटने लगते तो मैं उसी तरह उखड़ आती जिस तरह पोली जमीन से घास बड़ी आसानी से जड़-समेत खिंच आती है। बंगाल की बेटी तो बात-बात में मरना चाहती

है। लेकिन इस तरह मरने में कौन-सी बहादुरी है। हम लोगों के लिए मरना इतना आसान है कि मरते लज्जा आती है।

मेरी बेटी संध्या-तारा की तरह क्षण-भर के लिए उदित होकर अस्त हो गई। मैं फिर से अपने दैनिक कामों में और गाय-बछड़ों में लग गई। इसी तरह मेरा जीवन आखिर तक जैसे-तैसे कट जाता; आज तुम्हें यह चिट्ठी लिखने की जरूरत न पड़ती, लेकिन, कभी-कभी हवा एक मामूली-सा बीज उड़ाकर ले जाती है और पक्के दालान में पीपल का अंकुर फूट उठता है; और होते-होते उसी से लकड़ी-पत्थर की छाती विदीर्ण होने लग जाती है। मेरी गृहस्थी की पक्की व्यवस्था में भी जीवन का एक छोटा-सा कण न जाने कहाँ से उड़कर आ पड़ा; तभी से दरार शुरू हो गई।

जब विधवा माँ की मृत्यु के बाद मेरी बड़ी जेठानी की बहन बिंदु ने अपने चचेरे भइयों के अत्याचार के मारे एक दिन हमारे घर में अपनी दीदी के पास आश्रय लिया था, तब तुम लोगों ने सोचा था, यह कहाँ की बला आ गई। आग लगे मेरे स्वभाव को, करती भी क्या। देखा, तुम लोग सब मन-ही-मन खीज उठे हो, इसीलिए उस निराश्रिता लड़की को घेरकर मेरा संपूर्ण मन एकाएक जैसे कमर बाँधकर खड़ा हो गया हो। पराए घर में, पराए लोगों की अनिच्छा होते हुए भी आश्रय लेना - कितना बड़ा अपमान है यह। यह अपमान भी जिसे विवश होकर स्वीकार करना पड़ा हो उसे क्या धक्का देकर एक कोने में डाल दिया जाता है?

बाद में मैंने अपनी बड़ी जेठानी की दशा देखी। उन्होंने अपनी गहरी संवेदना के कारण ही बहन को अपने पास बुलाया था, लेकिन जब उन्होंने देखा कि इसमें पति की इच्छा नहीं है, तो उन्होंने ऐसा भाव दिखाना शुरू किया मानो उन पर कोई बड़ी बला आ पड़ी हो, मानो अगर वह किसी तरह दूर हो सके तो जान बचे। उन्हें इतना साहस न हुआ कि वे अपनी अनाथ बहन के प्रति खुले मन से स्नेह प्रकट कर सकें। वे पतिव्रता थीं।

उनका यह संकट देखकर मेरा मन और भी दुखी हो उठा। मैंने देखा, बड़ी जेठानी ने खासतौर से सबको दिखा-दिखाकर बिंदु के खाने-पहनने की ऐसी रद्दी व्यवस्था की और उसे घर में इस तरह नौकरानियों के-से काम सौंप दिए कि मुझे दु:ख ही नहीं, लज्जा भी हुई। मैं सबके सामने इस बात को प्रमाणित करने में लगी रहती थी कि हमारी गृहस्थी को बिंदु बहुत सस्ते दामों में मिल गई है। ढेरों काम करती है फिर भी खर्च की दृष्टि से बेहद सस्ती है।

मेरी बड़ी जेठानी के पितृ-वंश में कुल के अलावा और कोई बड़ी चीज न थी, न रूप था, न धन। किस तरह मेरे ससुर के पैरों पड़ने पर तुम लोगों के घर में उनका ब्याह हुआ था, यह बात तुम अच्छी तरह जानते हो। वे सदा यही सोचती रहीं कि उनका विवाह तुम्हारे वंश के प्रति बड़ा भारी अपराध था। इसीलिए वे सब बातों में अपने-आपको भरसक दूर रखकर, अपने को छोटा मानकर तुम्हारे घर में बहुत ही थोड़ी जगह में सिमटकर रहती थीं।

लेकिन उनके इस प्रशंसनीय उदाहरण से हम लोगों को बड़ी कठिनाई होती रही। मैं अपने-आपको हर तरफ से इतना बेहद छोटा नहीं बना पाती, मैं जिस बात को अच्छा समझती हूँ उसे किसी और की खातिर बुरा समझने को मैं उचित नहीं मानती - इस बात के तुम्हें भी बहुत-से प्रमाण मिल चुके हैं। बिंदु को मैं अपने कमरे में घसीट लाई। जीजी कहने लगीं, "मझली बहू गरीब घर की बेटी का दिमाग खराब कर डालेगी।" वे सबसे मेरी इस ढंग से शिकायत करती फिरती थीं मानो मैंने कोई भारी आफत ढा दी हो। लेकिन मैं अच्छी तरह जानती हूँ, वे मन-ही-मन सोचती थीं कि जान बची। अब अपराध का बोझ मेरे सिर पर पड़ने लगा। वे अपनी बहन के प्रति खुद जो स्नेह नहीं दिखा पाती थीं वही मेरे द्वारा प्रकट करके उनका मन हल्का हो जाता। मेरी बड़ी जेठानी बिंदु की उम्र में से दो-एक अंक कम कर देने की चेष्टा किया करती थीं, लेकिन अगर अकेले में उनसे यह कहा जाता कि उसकी अवस्था चौदह से कम नहीं थी, तो ज्यादती न होती। तुम्हें तो मालूम है, देखने में वह इतनी कुरूप थी कि अगर वह फर्श पर गिरकर अपना सिर फोड़ लेती तो भी लोगों को घर के फर्श की ही चिंता होती। यही कारण है कि माता-पिता के न होने पर ऐसा कोई न था जो उसके विवाह की सोचता, और ऐसे लोग भी भला कितने थे जिनके प्राणों में इतना बल हो कि उससे ब्याह कर सकें।

बिंदु बहुत डरती-डरती मेरे पास आई। मानो अगर मेरी देह उससे छू जाएगी तो मैं सह नहीं पाऊँगी। मानो संसार में उसको जन्म लेने का कोई अधिकार ही न था। इसीलिए वह हमेशा अलग हटकर आँख बचाकर चलती। उसके पिता के यहाँ उसके चचेरे भाई उसके लिए ऐसा एक भी कोना नहीं छोड़ना चाहते थे जिसमें वह फालतू चीज की तरह पड़ी रह सके। फालतू कूड़े को घर के आस-पास अनायास ही स्थान मिल जाता है क्योंकि मनुष्य उसको भूल जाता है; लेकिन अनावश्यक लड़की एक तो अनावश्यक होती है; दूसरे, उसको भूलना भी कठिन होता है। इसलिए उसके लिए घूरे पर भी जगह नहीं होती। फिर भी यह कैसे कहा जा सकता है कि उसके चचेरे भाई ही संसार में परमावश्यक पदार्थ थे। जो हो, वे लोग थे खूब। यही कारण है कि जब मैं

बिंदु को अपने कमरे में बुला लाई तो उसकी छाती धक्-धक् करने लग गई। उसका डर देखकर मुझे बड़ा दु:ख हुआ। मेरे कमरे में उसके लिए थोड़ी-सी जगह है, यह बात मैंने बड़े प्यार से उसे समझाई।

लेकिन मेरा कमरा एक मेरा ही कमरा तो था नहीं। इसलिए मेरा काम आसान नहीं हुआ। मेरे पास दो-चार दिन रहने पर ही उसके शरीर में न जाने लाल-लाल क्या निकल आया। शायद अम्हौरी रही होगी या ऐसा ही कुछ होगा; तुमने कहा शीतला। क्यों न हो, वह बिंदु थी न। तुम्हारे मोहल्ले के एक अनाड़ी डॉक्टर ने आकर बताया, दो-एक दिन और देखे बिना ठीक से कुछ नहीं कहा जा सकता। लेकिन दो-एक दिन तक धीरज किसको होता। बिंदु तो अपनी बीमारी की लज्जा से ही मरी जा रही थी। मैंने कहा, शीतला है तो हो, मैं उसे अपने जच्चा-घर में लिवा ले जाऊँगी, और किसी को कुछ करने की जरूरत नहीं। इस बात पर जब तुम सब लोग मेरे ऊपर भड़ककर क्रोध की मूर्ति बन गए। यही नहीं, जब बिंदु की जीजी भी बड़ी परेशानी दिखाती हुई उस अभागी लड़की को अस्पताल भेजने का प्रस्ताव करने लगीं, तभी उसके शरीर के वे सारे लाल-लाल दाग एकदम विलीन हो गए। मैंने देखा कि इस बात से तुम लोग और भी व्यग्र हो उठे। कहने लगे, अब तो वाकई शीतला बैठ गई है। क्यों न हो, वह बिंदु थी न।

अनादर के पालन-पोषण में एक बड़ा गुण है। शरीर को वह एकदम अजर-अमर कर देता है। बीमारी आने का नाम नहीं लेती, मरने के सारे आम रास्ते बिल्कुल बंद हो जाते हैं। इसीलिए रोग उसके साथ मजाक करके चला गया, हुआ कुछ नहीं। लेकिन यह बात अच्छी तरह स्पष्ट हो गई कि संसार में ज्यादा साधनहीन व्यक्ति को आश्रय देना ही सबसे कठिन है। आश्रय की आवश्यकता उसको जितनी अधिक होती है आश्रय की बाधाएँ भी उसके लिए उतनी ही विषम होती हैं। बिंदु के मन से जब मेरा डर जाता रहा तब उसको एक और कुग्रह ने पकड़ लिया। वह मुझे इतना प्यार करने लगी कि मुझे डर होने लगा। स्नेह की ऐसी मूर्ति तो संसार में पहले कभी देखी ही न थी। पुस्तकों में पढ़ा अवश्य था, पर वह भी स्त्री-पुरुष के बीच ही। बहुत दिनों से ऐसी कोई घटना नहीं हुई थी कि मुझे अपने रूप की बात याद आती। अब इतने दिनों बाद यह कुरूप लड़की मेरे उसी रूप के पीछे पड़ गई। रात-दिन मेरा मुँह देखते रहने पर भी उसकी आँखों की प्यास नहीं बुझती थी। कहती, जीजी तुम्हारा यह मुँह मेरे अलावा और कोई नहीं देख पाता। जिस दिन मैं स्वयं ही अपने केश बाँध लेती उस दिन वह बहुत रूठ जाती। अपने हाथों से मेरे केश-भार को हिलाने-डुलाने में उसे बड़ा आनंद आता। कभी कहीं दावत में जाने के अतिरिक्त और कभी तो मुझे साज-श्रृंगार की

आवश्यकता पड़ती ही न थी, लेकिन बिंदु मुझे तंग कर-करके थोड़ा-बहुत सजाती रहती। वह लड़की मुझे लेकर बिल्कुल पागल हो गई थी।

तुम्हारे घर के भीतरी हिस्से में कहीं रत्ती-भर भी मिट्टी न थी। उत्तर की ओर की दीवार में नाली के किनारे न जाने कैसे एक गाब का पौधा निकला। जिस दिन देखती कि उस गाब के पौधे में नई लाल-लाल कोंपलें निकल आई हैं, उसी दिन जान पड़ता कि धरती पर वसंत आ गया है, और जिस दिन मेरी घर-गृहस्थी में जुटी हुई इस अनादृत लड़की के मन का ओर-छोर किसी तरह रंग उठा उस दिन मैंने जाना कि हृदय के जगत में भी वसंत की हवा बहती है। वह किसी स्वर्ग से आती है, गली के मोड़ से नहीं।

बिंदु के स्नेह के दु:सह वेग ने मुझे अधीर कर डाला था। मैं मानती हूँ कि मुझे कभी-कभी उस पर क्रोध आ जाता; लेकिन उस स्नेह में मैंने अपना एक ऐसा रूप देखा जो जीवन में मैं पहले कभी नहीं देख पाई थी। वही मेरा मुख्य स्वरूप है।

इधर मैं बिंदु-जैसी लड़की को जो इतना लाड़-प्यार करती थी यह बात तुम लोगों को बड़ी ज्यादती लगी। इसे लेकर बराबर खटपट होने लगी। जिस दिन मेरे कमरे से बाजूबंद चोरी हुआ उस दिन इस बात का आभास देते हुए तुम लोगों को तनिक भी लज्जा न आई कि इस चोरी में किसी-न-किसी रूप में बिंदु का हाथ है। जब स्वदेशी आंदोलनों में लोगों के घर की तलाशियाँ होने लगीं तब तुम लोग अनायास ही यह संदेह कर बैठे कि बिंदु पुलिस द्वारा रखी गई स्त्री-गुप्तचर है। इसका और तो कोई प्रमाण न था; प्रमाण बस इतना ही था कि वह बिंदु थी। तुम लोगों के घर की दासियाँ उनका कोई भी काम करने से इनकार कर देती थीं - उनमें से किसी से अपने काम के लिए कहने में वह लड़की भी संकोच के मारे जड़वत हो जाती थी। इन्हीं सब कारणों से उसके लिए मेरा खर्च बढ़ गया। मैंने खास तौर से अलग से एक दासी रख ली। यह बात तुम लोगों को अच्छी नहीं लगी। बिंदु को पहनने के लिए मैं जो कपड़े देती थी, उन्हें देखकर तुम इतने क्रुद्ध हुए कि तुमने मेरे हाथ-खर्च के रुपये ही बंद कर दिए। दूसरे ही दिन से मैंने सवा रुपये जोड़े की मोटी कोरी मिल की धोती पहनना शुरू कर दिया। और जब मोती की माँ मेरी जूठी थाली उठाने के लिए आई तो मैंने उसको मना कर दिया। मैंने खुद जूठा भात बछड़े को खिलाने के बाद आंगन के नल पर जाकर बर्तन मल लिए। एक दिन एकाएक इस दृश्य को देखकर तुम प्रसन्न न हो सके। मेरी खुशी के बिना तो काम चल सकता है, पर तुम लोगों की खुशी के बिना नहीं चल सकता - यह बात आज तक मेरी समझ में नहीं आई। उधर ज्यों-ज्यों तुम लोगों का

क्रोध बढ़ता जा रहा था त्यों-त्यों बिंदु की आयु भी बढ़ती जा रही थी। इस स्वाभाविक बात पर तुम लोग अस्वाभाविक ढंग से परेशान हो उठे थे।

एक बात याद करके मुझे आश्चर्य होता रहा है कि तुम लोगों ने बिंदु को जबर्दस्ती अपने घर से विदा क्यों नहीं कर दिया? मैं अच्छी तरह समझती हूँ कि तुम लोग मन-ही-मन मुझसे डरते थे। विधाता ने मुझे बुध्दि दी है, भीतर-ही-भीतर इस बात की खातिर किए बिना तुम लोगों को चैन नहीं पड़ता था। अंत में अपनी शक्ति से बिंदु को विदा करने में असमर्थ होकर तुम लोगों ने प्रजापति देवता की शरण ली। बिंदु का वर ठीक हुआ। बड़ी जेठानी बोली, जान बची। माँ काली ने अपने वंश की लाज रख ली। वर कैसा था, मैं नहीं जानती। तुम लोगों से सुना था कि सब बातों में अच्छा है। बिंदु मेरे पैरों से लिपटकर रोने लगी। बोली, जीजी, मेरा ब्याह क्यों कर रही हो भला। मैंने उसको समझाते-बुझाते कहा, बिंदु, डर मत, मैंने सुना है तेरा वर अच्छा है।

बिंदु बोली, "अगर वर अच्छा है तो मुझमें भला ऐसा क्या है जो उसे पसंद आ सके।" लेकिन वर-पक्ष वालों ने तो बिंदु को देखने के लिए आने का नाम भी न लिया। बड़ी जीजी इससे बड़ी निश्चिंत हो गईं। लेकिन बिंदु रात-दिन रोती रहती। चुप होने का नाम ही न लेती। उसको क्या कष्ट है, यह मैं जानती थी। बिंदु के लिए मैंने घर में बहुत बार झगड़ा किया था लेकिन उसका ब्याह रुक जाए यह बात कहने का साहस नहीं होता था। कहती भी किस बल पर। मैं अगर मर जाती तो उसकी क्या दशा होती।

एक तो लड़की जिस पर काली; जिसके यहाँ जा रही है, वहाँ उसकी क्या दशा होगी, इस बातों की चिंता न करना ही अच्छा था। सोचती तो प्राण काँप उठते।

बिंदु ने कहा, "जीजी, ब्याह के अभी पाँच दिन और हैं। इस बीच क्या मुझे मौत नहीं आएगी।"

मैंने उसको खूब धमकाया। लेकिन अंतर्यामी जानते हैं कि अगर किसी स्वाभाविक ढंग से बिंदु की मृत्यु हो जाती तो मुझे चैन मिलता। ब्याह के एक दिन पहले बिंदु ने अपनी जीजी के पास जाकर कहा, "जीजी, मैं तुम लोगों की गोशाला में पड़ी रहूँगी, जो कहोगी वही करूँगी, मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, मुझे इस तरह मत धकेलो।"

कुछ दिनों से जीजी की आँखों से चोरी-चोरी आँसू झर रहे थे। उस दिन भी झरने लगे। लेकिन सिर्फ हृदय ही तो नहीं होता। शास्त्र भी तो है। उन्होंने कहा, "बिंदु, जानती

नहीं, स्त्री की गति-मुक्ति सब-कुछ पति ही है। भाग्य में अगर दु:ख लिखा है तो उसे कोई नहीं मिटा सकता।"

असली बात तो यह थी कि कहीं कोई रास्ता ही न था - बिंदु को ब्याह तो करना ही पड़ेगा। फिर जो हो सो हो। मैं चाहती थी कि विवाह हमारे ही घर से हो। लेकिन तुम लोग कह बैठे वर के ही घर में हो, उनके कुल की यही रीति है। मैं समझ गई, बिंदु के ब्याह में अगर तुम लोगों को खर्च करना पड़ा तो तुम्हारे गृह-देवता उसे किसी भी भाँति नहीं सह सकेंगे। इसीलिए चुप रह जाना पड़ा। लेकिन एक बात तुममें से कोई नहीं जानता। जीजी को बताना चाहती थी, पर फिर बताई नहीं, नहीं तो वे डर से मर जातीं - मैंने अपने थोड़े-बहुत गहने लेकर चुपचाप बिंदु का श्रृंगार कर दिया था। सोचा था, जीजी की नजर में तो जरूर ही पड़ जाएगा। लेकिन उन्होंने जैसे देखकर भी नहीं देखा। दुहाई है धर्म की, इसके लिए तुम उन्हें क्षमा कर देना।

जाते समय बिंदु मुझसे लिपटकर बोली, "जीजी, तो क्या तुम लोगों ने मुझे एकदम त्याग दिया।" मैंने कहा, "नहीं बिंदु, तुम चाहे-जैसी हालत में रहो, प्राण रहते मैं तुम्हें नहीं त्याग सकती।"

तीन दिन बीते। तुम्हारे ताल्लुके के आसामियों ने तुम्हें खाने के लिए जो भेड़ा दिया था उसे मैंने तुम्हारी जठराग्नि से बचाकर नीचे वाली कोयले की कोठरी के एक कोने में बाँध दिया था। सवेरे उठते ही मैं खुद जाकर उसको दाना खिला आती। दो-एक दिन तुम्हारे नौकरों पर भरोसा करके देखा उसे खिलाने की बजाय उनका झुकाव उसी को खा जाने की ओर अधिक था। उस दिन सवेरे कोठरी में गई तो देखा, बिंदु एक कोने में गुड़-मुड़ होकर बैठी हुई है। मुझे देखते ही वह मेरे पैर पकड़कर चुपचाप रोने लगी। बिंदु का पति पागल था। "सच कह रही है, बिंदु?"

'तुम्हारे सामने क्या मैं इतना बड़ा झूठ बोल सकती हूँ, दीदी? वह पागल हैं। इस विवाह में ससुर की सम्मति नहीं थी, लेकिन वे मेरी सास से यमराज की तरह डरते थे। ब्याह के पहले ही काशी चल दिए थे। सास ने जिद करके अपने लड़के का ब्याह कर लिया।"

मैं वहीं कोयले के ढेर पर बैठ गई। स्त्री पर स्त्री को दया नहीं आती। कहती है, कोई लड़की थोड़े ही है। लड़का पागल है तो हो, है तो पुरुष।

देखने में बिंदु का पति पागल नहीं लगता। लेकिन कभी-कभी उसे ऐसा उन्माद चढ़ता कि उसे कमरे में ताला बंद करके रखना पड़ता। ब्याह की रात वह ठीक था।

लेकिन रात में जगते रहने के कारण और इसी तरह के और झंझटों के कारण दूसरे दिन से उसका दिमाग बिल्कुल खराब हो गया। बिंदु दोपहर को पीतल की थाली में भात खाने बैठी थी, अचानक उसके पति ने भात समेत थाली उठाकर आँगन में फेंक दी। न जाने क्यों अचानक उसको लगा, मानो बिंदु रानी रासमणि हो। नौकर ने, हो न हो, चोरी से उसी के सोने के थाल में रानी के खाने के लिए भात दिया हो। इसलिए उसे क्रोध आ गया था। बिंदु तो डर के मारे मरी जा रही थी। तीसरी रात को जब उसकी सास ने उससे अपने पति के कमरे में सोने के लिए कहा तो बिंदु के प्राण सूख गए। उसकी सास को जब क्रोध आता था तो होश में नहीं रहती थी। वह भी पागल ही थी, लेकिन पूरी तरह से नहीं। इसलिए वह ज्यादा खतरनाक थी। बिंदु को कमरे में जाना ही पड़ा। उस रात उसके पति का मिजाज ठंडा था। लेकिन डर के मारे बिंदु का शरीर पत्थर हो गया था। पति जब सो गए तब काफी रात बीतने पर वह किस तरह चतुराई से भागकर चली आई, इसका विस्तृत विवरण लिखने की आवश्यकता नहीं है। घृणा और क्रोध से मेरा शरीर जलने लगा। मैंने कहा, इस तरह धोखे के ब्याह को ब्याह नहीं कहा जा सकता। बिंदु, तू जैसे रहती थी वैसे ही मेरे पास रह। देखूं, मुझे कौन ले जाता है। तुम लोगों ने कहा, बिंदु झूठ बोलती है। मैंने कहा, वह कभी झूठ नहीं बोलती। तुम लोगों ने कहा, तुम्हें कैसे मालूम?

मैंने कहा, मैं अच्छी तरह जानती हूँ। तुम लोगों ने डर दिखाया, अगर बिंदु के ससुराल वालों ने पुलिस-केस कर दिया तो आफत में पड़ जाएँगे। मैंने कहा, क्या अदालत यह बात न सुनेगी कि उसका ब्याह धोखे से पागल वर के साथ कर दिया गया है।

तुमने कहा, तो क्या इसके लिए अदालत जाएँगे। हमें ऐसी क्या गर्ज है?

मैंने कहा, जो कुछ मुझसे बन पड़ेगा, अपने गहने बेचकर करूँगी। तुम लोगों ने कहा, क्या वकील के घर तक दौड़ोगी? इस बात का क्या जवाब होता? सिर ठोकने के अलावा और कर भी क्या सकती थी।

उधर बिंदु की ससुराल से उसके जेठ ने आकर बाहर बड़ा हंगामा खड़ा कर दिया। कहने लगा, थाने में रिपोर्ट कर दूँगा। मैं नहीं जानती मुझमें क्या शक्ति थी -लेकिन जिस गाय ने अपने प्राणों के डर से कसाई के हाथों से छूटकर मेरा आश्रय लिया हो उसे पुलिस के डर से फिर उस कसाई को लौटाना पड़े यह बात मैं किसी भी प्रकार नहीं मान सकती थी। मैंने हिम्मत करके कहा, "करने दो थाने में रिपोर्ट।"

इतना कहकर मैंने सोचा कि अब बिंदु को अपने सोने के कमरे में ले जाकर कमरे में ताला लगाकर बैठ जाऊँ। लेकिन खोजा तो बिंदु का कहीं पता नहीं। जिस समय तुम लोगों से मेरी बहस चल रही थी उसी समय बिंदु ने स्वयं बाहर निकलकर अपने जेठ को आत्म-समर्पण कर दिया था। वह समझ गई थी कि अगर वह इस घर में रही तो मैं बड़ी आफत में पड़ जाऊँगी।

बीच में भाग आने से बिंदु ने अपना दु:ख और भी बढ़ा लिया। उसकी सास का तर्क था कि उनका लड़का उसको खाए तो नहीं जा रहा था न। संसार में बुरे पति के उदाहरण दुर्लभ भी नहीं हैं। उनकी तुलना में तो उनका लड़का सोने का चाँद था।

मेरी बड़ी जेठानी ने कहा - जिसका भाग्य ही खराब हो उसके लिए रोने से क्या फायदा? पागल-वागल जो भी हो, है तो स्वामी ही न। तुम लोगों के मन में लगातार उस सती-साध्वी का दृष्टांत याद आ रहा था जो अपने कोढ़ी पति को अपने कंधों पर बिठाकर वेश्या के यहाँ ले गई थी। संसार-भर में कायरता के इस सबसे अधम आख्यान का प्रचार करते हुए तुम लोगों के पुरुष-मन को कभी तनिक भी संकोच न हुआ। इसलिए मानव-जन्म पाकर भी तुम लोग बिंदु के व्यवहार पर क्रोध कर सके, उससे तुम्हारा सिर नहीं झुका। बिंदु के लिए मेरी छाती फटी जा रही थी, लेकिन तुम लोगों का व्यवहार देखकर मेरी लज्जा का अंत न था। मैं तो गाँव की लड़की थी, जिस पर तुम लोगों के घर आ पड़ी, फिर भगवान ने न जाने किस तरह मुझे ऐसी बुध्दि दे दी। धर्म-संबंधी तुम लोगों की यह चर्चा मुझे किसी भी प्रकार सहन नहीं हुई।

मैं निश्चयपूर्वक जानती थी कि बिंदु मर भले ही जाए, वह अब हमारे घर लौटकर नहीं आएगी। लेकिन मैं तो उसे ब्याह के एक दिन पहले यह आशा दिला चुकी थी कि प्राण रहते उसे नहीं छोड़ूँगी। मेरा छोटा भाई शरद कलकत्ता में कॉलेज में पढ़ता था। तुम तो जानते ही हो, तरह-तरह से वालंटियरी करना, प्लेग वाले मोहल्लों में चूहे मारना, दामोदर में बाढ़ आ जाने की खबर सुनकर दौड़ पड़ना - इन सब बातों में उसका इतना उत्साह था कि एफ.ए. की परीक्षा में लगातार दो बार फेल होने पर भी उसके उत्साह में कोई कमी नहीं आई। मैंने उसे बुलाकर कहा, "शरद, जैसे भी हो, बिंदु की खबर पाने का इंतजाम तुझे करना ही पड़ेगा। बिंदु को मुझे चिट्ठी भेजने का साहस नहीं होगा, वह भेजे भी तो मुझे मिल नहीं सकेगी।"

इस काम के बजाय यदि मैं उससे डाका डालकर बिंदु को लाने की बात कहती या उसके पागल स्वामी का सिर फोड़ देने के लिए कहती तो उसे ज्यादा खुशी होती।

शरद के साथ बातचीत कर रही थी तभी तुमने कमरे में आकर कहा, तुम फिर यह क्या बखेड़ा कर रही हो? मैंने कहा, वही जो शुरू से करती आई हूँ। जब से तुम्हारे घर आई हूँ... लेकिन नहीं, वह तो तुम्हीं लोगों की कीर्ति है।

तुमने पूछा, बिंदु को लाकर फिर कहीं छिपा रखा है क्या?

मैंने कहा, बिंदु अगर आती तो मैं जरूर ही छिपाकर रख लेती, लेकिन वह अब नहीं आएगी। तुम्हें डरने की कोई जरूरत नहीं है। शरद को मेरे पास देखकर तुम्हारा संदेह और भी बढ़ गया। मैं जानती थी कि शरद का हमारे यहाँ आना-जाना तुम लोगों को पसंद नहीं है। तुम्हें डर था कि उस पर पुलिस की नजर है। अगर कभी किसी राजनीतिक मामले में फँस गया तो तुम्हें भी फँसा डालेगा। इसीलिए मैं भैया-दूज का तिलक भी आदमी के हाथों उसी के पास भिजवा देती थी, अपने घर नहीं बुलाती थी।

एक दिन तुमसे सुना कि बिंदु फिर भाग गई है, इसलिए उसका जेठ हमारे घर उसे खोजने आया है। सुनते ही मेरी छाती में शूल चुभ गए। अभागिनी का असह्य कष्ट तो मैं समझ गई, पर फिर भी कुछ करने का कोई रास्ता न था। शरद पता करने दौड़ा। शाम को लौटकर मुझसे बोला, बिंदु अपने चचेरे भाइयों के यहाँ गई थी, लेकिन उन्होंने अत्यंत क्रुद्ध होकर उसी वक्त उसे फिर ससुराल पहुँचा दिया। इसके लिए उन्हें हर्जाने का और गाड़ी के किराए का जो दंड भोगना पड़ा उसकी खार अब भी उनके मन से नहीं गई है।

श्रीक्षेत्र की तीर्थ-यात्रा करने के लिए तुम लोगों की काकी तुम्हारे यहाँ आकर ठहरीं। मैंने तुमसे कहा, मैं भी जाऊँगी। अचानक मेरे मन में धर्म के प्रति यह श्रध्दा देखकर तुम इतने खुश हुए कि तुमने तनिक भी आपत्ति नहीं की। तुम्हें इस बात का भी ध्यान था कि अगर मैं कलकत्ता में रही तो फिर किसी-न-किसी दिन बिंदु को लेकर झगड़ा कर बैठूँगी। मेरे मारे तुम्हें बड़ी परेशानी थी। मुझे बुधवार को चलना था, रविवार को ही सब ठीक-ठाक हो गया। मैंने शरद को बुलाकर कहा, जैसे भी हो बुधवार को पुरी जाने वाली गाड़ी में तुझे बिंदु को चढ़ा ही देना पड़ेगा।

शरद का चेहरा खिल उठा। वह बोला, डर की कोई बात नहीं, जीजी, मैं उसे गाड़ी में बिठाकर पुरी तक चला चलूँगा। इसी बहाने जगन्नाथ जी के दर्शन भी हो जाएँगे।

उसी दिन शाम को शरद फिर आया। उसका मुंह देखते ही मेरा दिल बैठ गया। मैंने पूछा, क्या बात है शरद! शायद कोई रास्ता नहीं निकला। वह बोला, नहीं।

मैंने पूछा, क्या उसे राजी नहीं कर पाए? उसने कहा, "अब जरूरत भी नहीं है। कल रात अपने कपड़ों में आग लगाकर वह आत्म-हत्या करके मर गई। उस घर के जिस भतीजे से मैंने मेल बढ़ा लिया था उसी से खबर मिली कि तुम्हारे नाम वह एक चिट्ठी रख गई थी, लेकिन वह चिट्ठी उन लोगों ने नष्ट कर दी।"

"चलो, छुट्टी हुई।"

गाँव-भर के लोग चीख उठे। कहने लगे, "लड़कियों का कपड़ों में आग लगाकर मर जाना तो अब एक फैशन हो गया है।" तुम लोगों ने कहा, "अच्छा नाटक है।" हुआ करे, लेकिन नाटक का तमाशा सिर्फ बंगाली लड़कियों की साड़ी पर ही क्यों होता है, बंगाली वीर पुरुषों की धोती की चुन्नटों पर क्यों नहीं होता, यह भी तो सोचकर देखना चाहिए।

ऐसा ही था बिंदु का दुर्भाग्य। जितने दिन जीवित रही, तनिक भी यश नहीं मिल सका। न रूप का, न गुण का - मरते वक्त भी यह नहीं हुआ कि सोच-समझकर कुछ ऐसे नए ढंग से मरती कि दुनिया-भर के लोग खुशी से ताली बजा उठते। मरकर भी उसने लोगों को नाराज ही किया।

जीजी कमरे में जाकर चुपचाप रोने लगीं, लेकिन उस रोने में जैसे एक सांत्वना थी। कुछ भी सही, जान तो बची, मर गई, यही क्या कम है। अगर बची रहती तो न जाने क्या हो जाता।

मैं तीर्थ में आ पहुँची हूँ। बिंदु के आने की तो जरूरत ही न रही। लेकिन मुझे जरूरत थी। लोग जिसे दु:ख मानते हैं वह तुम्हारी गृहस्थी में मुझे कभी नहीं मिला। तुम्हारे यहाँ खाने-पहनने की कोई कमी नहीं। तुम्हारे बड़े भाई का चरित्र चाहे जैसा हो, तुम्हारे चरित्र में ऐसा कोई दोष नहीं जिसके लिए विधाता को बुरा कह सकूँ। वैसे अगर तुम्हारा स्वभाव तुम्हारे बड़े भाई की तरह भी होता तो भी शायद मेरे दिन करीब-करीब ऐसे ही कट जाते और मैं अपनी सती-साध्वी बड़ी जेठानी की तरह पति देवता को दोष देने के बजाय विश्व-देवता को ही दोष देने की चेष्टा करती। अतएव, मैं तुमसे कोई शिकायत नहीं करना चाहती - मेरी चिट्ठी का कारण यह नहीं है।

लेकिन मैं अब माखन बड़ाल की गली के तुम्हारे उस सत्ताईस नंबर वाले घर में लौटकर नहीं आऊँगी। मैं बिंदु को देख चुकी हूँ। इस संसार में नारी का सच्चा परिचय क्या है, यह मैं पा चुकी हूँ। अब तुम्हारी कोई जरूरत नहीं। और फिर मैंने यह भी देखा है कि वह लड़की ही क्यों न हो, भगवान ने उसका त्याग नहीं किया। उस पर

तुम लोगों का चाहे कितना ही जोर क्यों न रहा हो, वह उसका अंत नहीं था। वह अपने अभागे मानव जीवन से बड़ी थी। तुम लोगों के पैर इतने लंबे नहीं थे कि तुम मनमाने ढंग से अपने हिसाब से उसके जीवन को सदा के लिए उनसे दबाकर रख सकते, मृत्यु तुम लोगों से भी बड़ी है। अपनी मृत्यु में वह महान है - वहाँ बिंदु केवल बंगाली परिवार की लड़की नहीं है, केवल चचेरे भाइयों की बहन नहीं है, केवल किसी अपरिचित पागल पति की प्रवंचिता पत्नी नहीं है। वहाँ वह अनंत है।

मृत्यु की उस वंशी का स्वर उस बालिका के भग्न हृदय से निकलकर जब मेरे जीवन की यमुना के पास बजने लगा तो पहले-पहल मानो मेरी छाती में कोई बाण बिंध गया हो। मैंने विधाता से प्रश्न किया, "इस संसार में जो सबसे अधिक तुच्छ है वही सबसे अधिक कठिन क्यों है?" इस गली में चारदीवारी से घिरे इस निरानंद स्थान में यह जो तुच्छतम बुदबुद है, वह इतनी भयंकर बाधा कैसे बन गया? तुम्हारा संसार अपनी शठ-नीतियों से क्षुधा-पात्र को सँभाले कितना ही क्यों न पुकारे, मैं उस अंत:पुर की जरा-सी चौखट को क्षण-भर के लिए भी पार क्यों न कर सकी? ऐसे संसार में ऐसा जीवन लेकर मुझे इस अत्यंत तुच्छ काठ पत्थर की आड़ में ही तिल-तिलकर क्यों मरना होगा? कितनी तुच्छ है यह मेरी प्रतिदिन की जीवन-यात्रा। इसके बंधे नियम, बँधे अभ्यास, बंधी हुई बोली, बँधी हुई मार सब कितनी तुच्छ है - फिर भी क्या अंत में दीनता के उस नाग-पाश बंधन की ही जीत होगी, और तुम्हारे अपने इस आनंद-लोक की, इस सृष्टि की हार?

लेकिन, मृत्यु की वंशी बजने लगी- कहाँ गई राज-मिस्त्रियों की बनाई हुई वह दीवार, कहाँ गया तुम्हारे घोर नियमों से बँधा वह काँटों का घेरा। कौन-सा है वह दु:ख, कौन-सा है वह अपमान जो मनुष्य को बंदी बनाकर रख सकता है। यह लो, मृत्यु के हाथ में जीवन की जय-पताका उड़ रही है। अरी मझली बहू, तुझे डरने की अब कोई जरूरत नहीं। मझली बहू के इस तेरे खोल को छिन्न होते एक निमेष भी न लगा।

तुम्हारी गली का मुझे कोई डर नहीं। आज मेरे सामने नीला समुद्र है, मेरे सिर पर आषाढ़ के बादल।

तुम लोगों की रीति-नीति के अँधेरे ने मुझे अब तक ढक रखा था। बिंदु ने आकर क्षण-भर के लिए उस आवरण के छेद में से मुझे देख लिया। वही लड़की अपनी मृत्यु द्वारा सिर से पैर तक मेरा वह आवरण उघाड़ गई है। आज बाहर आकर देखती हूँ, अपना गौरव रखने के लिए कहीं जगह ही नहीं है। मेरा यह अनादृत रूप जिनकी

आँखों को भाया है वे सुंदर आज संपूर्ण आकाश से मुझे निहार रहे हैं। अब मझली बहू की खैर नहीं।

तुम सोच रहे होगे, मैं मरने जा रही हूँ - डरने की कोई बात नहीं। तुम लोगों के साथ मैं ऐसा पुराना मजाक नहीं करूँगी। मीराबाई भी तो मेरी ही तरह नारी थी। उनकी जंजीरें भी तो कम भारी नहीं थीं, बचने के लिए उनको तो मरना नहीं पड़ा। मीराबाई ने अपने गीत में कहा था, 'बाप छोड़े, माँ छोड़े, जहाँ कहीं जो भी हैं, सब छोड़ दें, लेकिन मीरा की लगन वहीं रहेगी प्रभु, अब जो होना है सो हो।' यह लगन ही तो जीवन है। मैं अभी जीवित रहूँगी। मैं बच गई।

तुम लोगों के चरणों के आश्रय से छूटी हुई,

मृणाल